P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika
E: ISSN NO.: 2349-980X Vol-III* Issue-II* October-2015

समकालीन कथा साहित्य में महिला उपन्यासकारों के सामाजिक चिंतन का केन्द्रीय विषय : एक तुलनात्मक अध्ययन

वर्षा रानी
सहायक प्राध्यापिका,
हिन्दी विभाग,
राजकीय महाविद्यालय,
भदोही

सारांश

1975 से निरंतर कथा साहित्य में रचनारत समकालीन हिन्दी महिला लेखिकाओं का सामाजिक चिंतन उनके उपन्यासों में एक व्यापक फलक पर अभिव्यक्त हुआ है। समकालीन समाज में बदलते मानवीय मूल्यों और सामाजिक परिस्थितियों से लेकर धार्मिक, राजनैतिक, आर्थिक आदि सभी क्षेत्रों की अनेकानेक विसंगतियाँ इन लेखिकाओं के चिंतन का विषय बना हैं। यद्यपि महिला उपन्यासकारों ने सातवें आठवें द"ाक में अधिका"ातः नारी विम"ा को ही अपने चिंतन केन्द्र में रखा तथापि नवें द"ाक से उनके चिंतन का आयाम व्यापक होता चला गया। समाज के प्रत्येक अंग में व्याप्त भ्रष्टाचार को इन लेखिकाओं ने अपनी सूक्ष्म चिंतन दृष्टि से चित्रित किया है। मन्नू भण्डारी से लेकर अब तक की महिला उपन्यासकारों में समाज के अलग अलग क्षेत्रों और वर्गों की जीवन स्थितियों का मूल्यांकन करने की अद्भुत वैचारिक क्षमता का निरंतर विकास हुआ है। वे विषय चयन से लेकर अभिव्यक्ति के नवीनतम प्रयोगों तक में पुरुष उपन्यासकारों के समक्ष प्रतिष्ठित दिखायी देती हैं। उपन्यास के क्षेत्र में महिला उपन्यासकारो का पदार्पण स्वातंत्र्योत्तर युग में हुआ, जबकि पुरुष कथाकार अपेक्षाकृत बहुत पहले से (प्रेमचंद पूर्व युग से) ही उपन्यास लिख रहे थे। 'उपन्यास' शब्द की वास्तविक परिभाषा को प्रेमचंद जी ने अपने उपन्यासों में समाज को चित्रित कर स्पष्ट किया। प्रेमचंद युग से ही सामाजिक यथार्थ उपन्यास विधा की मौलिक वि"ाषता बन गई। प्रेमचंद के बाद समाज की महत्वपूर्ण इकाई व्यक्ति और उसका मनोविज्ञान उपन्यास की विषयवस्तु बना। प्रेमचंदोत्तर युग में पुरुषों के साथ साथ महिलाओं ने भी उपन्यास लेखन के क्षेत्र में कदम रखा। सातवें द"ाक में महिलाआ की एक स"ाक्त पीढ़ी उपन्यास लेखन के क्षेत्र में सामने आयी, जिसने अत्यल्प समय में स्वयं को अपनी रचना क्षमता से प्रमाणित और प्रतिष्ठित किया ।

मुख्य शब्द : सातवें दशक की महिला कथाकार, चिंतन की दृष्टि से स्त्री–पुरुष कथाकारों की समानता, समीक्ष्य काल 1975–2000, स्त्री विमर्श, आदिवासी जनजातीय विमर्श, सामाजिक विद्रुपताएँ।

प्रस्तावना

उपन्यास साहित्य में प्रेमचंद युग से ही चली आ रही सामाजिक चिंतन की परंपरा में वि"ाष रूप से समाज का शोषित वर्ग चिंतन का विषय बना है। प्रेमचंद के सेवासदन, निर्मला, गबन, गोदान आदि उपन्यासों में नारी और निम्नमध्यवर्गीय किसानों को चिंतन का विषय बनाया गया। इस प्रकार सामाजिक उपन्यासों की परंपरा में स्त्री और निम्नवर्ग के किसान, मजदूर और मध्यवर्ग पमुख रूप से चिंतन के केन्द्र में रहे हैं। समकालीन सामाजिक उपन्यासों में नारी वर्ग की व्यक्तिगत और सामाजिक समस्याओं के संवेदन"ाील और व्यापक चित्रण में महिला लेखिकाओं की वि"ाष भूमिका रही। इन्होंने समाज के प्रत्येक क्षेत्र में स्त्रियों की वास्तविक स्थिति का मूल्यांकन किया। प्रायः सभी महिला उपन्यासकारों ने समाज में नारी की स्थिति का मूल्यांकन करते हुए यह चिंतन प्रस्तुत किया है कि स्त्री चाहे जिस वर्ग अथवा समाज की हो वह सभी क्षेत्रों और द"ाओं में शोषित है। उदाहरण के लिए प्रभा खेतान के उपन्यास छिन्नमस्ता की नायिका प्रिया कलकत्ता के रूढ़िवादी परिवार से लेकर विदे"ाों की अत्याधुनिक संस्कृति में भी उतनी ही शोषित और संत्रासित है। प्रभा खेतान के ही 'आओ पे पे घर चलें' में विदे"ाों में रहने वाली एकाकी जीवन जी रही स्त्री आइलिन और मिसेज एलिजा के वैवाहिक जीवन की विसंगतियां प्रमाणित करती हैं कि विदे"ाों में भी स्त्रियों की द"ाा शोचनीय ही है। इसी प्रकार चित्रा मुद्गल के उपन्यास की नायिका नमिता एक स्वावलंबी युवती होते हुए भी अपने कार्य क्षेत्र में

बार बार मानसिक और शारीरिक उत्पीड़न का ि"ाकार होती है। गीतांजलि श्री के 'माई' नामक उपन्यास में सुनैना की माई सामंतीय परिवार की सीमाओं में बंधी परिवार के लिए पूर्ण समर्पित नारी है तो सुनैना आधुनिक चेतना की होकर भी भीतर ही भीतर घुटन महसूस करती है। ग्रामीण समाज में सामाजिक रूढ़ियों में आबद्ध नारियों की स्थिति के साथ–साथ अति पिछड़ी जनजातियों तक की नारियों की स्थिति और संघर्ष को मैत्रेयी पुष्पा ने क्रम"ाः 'चाक' और 'अल्मा कबूतरी' में चित्रित किया है। मृदुला गर्ग के 'चित्तकोबरा' में नारी के आंतरिक द्वंद्व की कथा और 'कठगुलाब' में पुरुष समाज में नारी के दोहन–शोषण और मुक्ति संघर्ष की कथा है। इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि महिला उपन्यासकारों ने नारी जीवन के प्रायः सभी पहलुओं पर अपना चिंतन प्रस्तुत किया है। ग्रामीण परिवे"ा से लेकर विदे"ाों तक, घर से लेकर बाहर तक सर्वत्र स्त्रियां शोषित हैं और इस शोषण के विरुद्ध संघर्षरत भी। स्त्री विम"ा पर आधारित अपने सामाजिक चिंतन के साथ–साथ आठवें नवें द"ाक की महिला उपन्यासकारों ने समाज के अन्य वर्गों और क्षेत्रों की विसंगतियों को भी विभिन्न परिवे"ाों के अंतर्गत अपने चिंतन का विषय बनाया है। ध्यातव्य है कि पुरुष कथाकारों ने भी अपने सामाजिक उपन्यासों में प्रायः इन्हीं विषयों को चिन्तन का विषय बनाया है। प्रस्तुत शोधपत्र में समीक्ष्य काल 1975 से 2000 के मध्य समाज के परिप्रेक्ष्य में उपन्यास साहित्य में वर्णित महिला उपन्यासकारों के सामाजिक चिंतन के वैविध्य एवं निरंतर परिवर्तन को इसी कालखण्ड में रचनारत पुरुष कथाकारों के समतुल्य विवेचित करने का प्रयास किया गया है। समाज को बिंबित करने वाली सबसे स"ाक्त विधा उपन्यास है। युग जीवन का यथार्थ प्रस्तुत करने वाली इस विधा में समकालीन समाज के विविध पक्षों का अंकन समकालीन उपन्यास साहित्य में किया गया है। समकालीन उपन्यासो में ग्रामीण परिवे"ा की जीवन विसंगतियां उपन्यासकारों के सामाजिक चिंतन का प्रमुख विषय रही हैं। ग्रामीण अंचल पर अपना चिंतन प्रस्तुत करने वाले प्रमुख उपन्यासकारों में जहां शैले"ा मटियानी ने पर्वतीय अंचल की जिंदगी को 'सर्पगंधा' सदृ"ा उपन्यासों में अपने चिंतन का विषय बनाया जिसमें प्रमुख रूप से पहाड़ी क्षेत्र की स्त्रियों और दलितों की पीड़ा का अंकन है, वहीं मृणाल पाण्डे ने भी कुमायूं गढ़वाल के इतिहास और संस्कृति को तथा वहां के जीवन में आए आठ पीढ़ियों के परिवर्तन, गर्व और पीड़ा को 'पटरंगपुराण' में अभिव्यक्ति दी। कई पीढ़ियों की कथा के माध्यम से अंचल वि"ोष की संस्कृति को अभिव्यक्त करने वाले उपन्यासों में भीष्म साहनी का 'मय्यादास की माड़ी' और मृणाल पाण्डे का 'पटरंग पुराण' उल्लेखनीय है। इन दोनों उपन्यासों की तुलना करते हुए डॉ. राजेन्द्र यादव ने लिखा है–' भीष्म साहनी के 'मय्यादास की माड़ी' और मृणाल पाण्डे के 'पटरंगपुराण' में एक का कथा केन्द्र प"िचमी पंजाब का है तो दूसरे का कुमाऊंनी अंचल। दोनों ही उपन्यासों में भारतीय समाज के अत्यंत आत्मीय और अंतरंग अनुभवों का साक्षात्कार होता है। इन उपन्यासों के प्रमुख पात्रों की पीढ़ियों की कहानी में व्यक्ति और समाज की द्वंद्वात्मक परिवर्तन को सहज रूप से घटित होते देखा जा सकता है।.....दोनों ही उपन्यास समाज की इकाई को केन्द्र में रखकर लिखे गये एक सदी के पारिवारिक इतिहास हैं।'[1] इसी प्रकार पंजाब के गावों की पृष्ठभूमि म वहां के जाट किसानों की जिंदगी को चिंतन का विषय बनाने वाले प्रमुख पुरुष उपन्यासकार जगदी"ाचंद्र माथुर के धरती धन न अपना, कभी न छोड़े खेत, घास गोदाम आदि उपन्यासों और महिला उपन्यासकार कृष्णा सोवती के वृहद उपन्यास 'जिंदगीनामा' में जाट किसानों की सामन्ती और मध्ययुगीन प्रवृत्तियों, छोटी–छोटी बातों के लिए कट मरने और मुकदमे बाजी में सारी सम्पत्ति स्वाहा कर डालने की अक्खड़ता, पु"ातैनी विवादों में उलझे रहना आदि मनोवृत्तियों को चित्रित किया गया है। जगदी"ा चंद्र माथुर ने जहां अपने उपन्यासों में इन जाट किसानों के जीवन के कुछ प्रमुख बिंदुओं को ही चिंतन के केन्द्र में रखा है, वहीं कृष्णा सोवती ने एक ही उपन्यास में बीसवीं शताब्दी के प्रथम दो द"ाकों से लेकर आजादी मिलने के पूर्व तक ब्रिटि"ा शासन के अंतर्गत जीवन यापन करने वाले पंजाब के जाट किसानों की सम्पूर्ण जीवन संस्कृति का व्यापक चित्रण किया है और विभाजन से पूर्व के पंजाब की सांझी संस्कृति के चित्रण के माध्यम से विभाजन की दुःखद स्थिति को मार्मिक अभिव्यक्ति दी है।

मध्यप्रदे"ा, झारखण्ड, बुन्देलखण्ड आदि राज्यों के जंगलों में आज भी अनेक जनजातियां सभ्य समाज के हासिए पर जी रही हैं। इन जनजातियों को चिंतन के केन्द्र में रखकर लेखन के साथ–साथ इनके विकास के लिए कटिबद्ध बांग्ला की महिला उपन्यासकार महा"वेता देवी का नाम वि"ाष उल्लेखनीय है। हिन्दी की महिला उपन्यासकारों में मैत्रेयी पुष्पा ने अल्मा कबूतरी के माध्यम से इन जनजातियों पर अपना महत्वपूर्ण चिंतन प्रस्तुत किया है। पुरुष उपन्यासकारों में राजेन्द्र अवस्थी का आदिवासी जनजाति विषयक चिंतन 'जंगल के फूल' नामक उपन्यास में मार्मिकता के साथ अभिव्यक्त हुआ है। इस उपन्यास में गोंड जाति के आदिवासियों के सामाजिक–सांस्कृतिक जीवन और आर्थिक शोषण के विरुद्ध संघर्ष का यथार्थ चित्रण किया गया है।

हिन्दी के समकालीन उपन्यास साहित्य में ग्रामीण अंचल को वि"ाष रूप से चिंतन का विषय बनाया गया है। बुंदेलखण्ड की ग्रामीण संस्कृति को केन्द्र में रखकर लिखे गये उपन्यासों में गोविन्द मिश्र की 'लाल पीली जमीन' और मैत्रेयी पुष्पा के 'चाक' और 'इदन्नमम' प्रमुख हैं। जहां गोविंद मिश्र ने अपने उपन्यास में बुंदेलखण्ड की अपसंस्कृति और हिंसक मानसिकता से ग्रस्त ग्रामीण और कस्बाई जीवन का चित्रण किया है, वहीं मैत्रेयी पुष्पा ने चाक और इदन्नमम में इसी ग्रामीण संस्कृति में शोषण के विरुद्ध संघर्ष के लिए जागृत नारी चेतना का विकास दिखाया है।

नगर और कस्बों में अनि"चय की जिन्दगी जी रहे मध्यवर्ग के द्वंद्व को समकालीन उपन्यासकारों ने अपने चिंतन का विषय बनाया है। इन उपन्यासकारों में अमृत लाल नागर, नरे"ा मेहता, लक्ष्मी नारायण लाल, राजन्द्र यादव, कमले"वर, रामदर"ा मिश्र, मोहन राके"ा, भीष्म साहनी, महीप सिंह आदि पुरुष उपन्यासकारों के साथ–साथ कृष्णा सोवती, चित्रा मुद्गल, ममता कालिया, चन्द्रकान्ता, कमल कुमार, नासिरा शर्मा, मधु कांकरिया आदि महिला उपन्यासकार उल्लेखनीय हैं। उदाहरणार्थ

अमृत लाल नागर के करवट और पीढ़ियां मूलतः मध्यवर्ग से जुड़े उपन्यास हैं। इन उपन्यासों में समय के साथ समाज में आए परिवर्तन का मध्यवर्ग पर पड़ने वाले प्रभाव का यथार्थ अंकन है। इसी प्रकार ममता कालिया ने 'नरक दर नरक' में उस व्यवस्था पर अपना चिंतन प्रस्तुत किया है, जिसमें मध्यवर्गीय ि"ाक्षित युवकों को अपनी भारी भरकम डिग्रियों और प्रतिभा के बावजूद रोजगार के लिए दर–दर भटकना पड़ रहा है। मध्यवर्गीय जीवन की विसंगतियों के चिंतन क्रम में उपन्यासकारों ने भारतीय मुस्लिम परिवारों को भी अपने उपन्यासों का विषय बनाया है। बदी उज्जमां का छाको की वापसी, मंजूर एहते"ाम का सूखा बरगद, मेहरुन्निसा परवेज का कोरजा और नासिरा शर्मा का ठीकरे की मंगनी आदि इस दृष्टि से उल्लेखनीय उपन्यास हैं।

समकालीन उपन्यासकारों ने महानगरीय परिवे"ा में बदलते जीवन मूल्यों को केन्द्र में रखकर अनेक उपन्यासों की रचना की है। यथा– दिल्ली के परिवे"ा को केन्द्र में रखकर लिखे गये कृष्णा सोवती का समय सरगम, मृणाल पाण्डे का रास्तों पर भटकते हुए, मंजुल भगत के अनारो, बेगाने घर में, गंजी, रामदर"ा मिश्र का बिना दरवाजे का मकान, भीष्म साहनी का बसंती आदि उपन्यास; बंबई महानगर का केन्द्र में रखकर लिखे गये मनोहर श्याम जो"ाी का कुरु कुरु स्वाहा, चित्रा मुद्गल के एक जमीन अपनी और आवां सदृ"ा उपन्यास, कलकत्ता के मारवाड़ी समाज (पूंजीपतियों और उद्योगपतियों का समाज) को केन्द्र में रखकर लिखे गये प्रभा खेतान के तालाबंदी, छिन्नमस्ता, अपने अपने चेहरे, पीली आंधी, अलका सरावगी का कलिकथा वाया बाइपास आदि तथा कलकत्ता के निम्नमध्यवर्ग के जीवन को चित्रित करने वाले माहे"वर के तलघर, सुरेन्द्र तिवारी के अंततः आदि प्रमुख उपन्यास हैं।

इन सभी उपन्यासों में महानगरीय जीवन में मध्यवर्ग का भटकाव, निम्नवर्ग की नारकीय जीवन परिस्थितियां, संयुक्त परिवारों का टूटना, अकेलापन, मानवीय मूल्यों का पतन, आदि समस्याओं को चिंतन का विषय बनाया गया है।

समकालीन महिला उपन्यासकारों ने विदे"ाी परिवे"ा को भी अपने उपन्यासों में सामाजिक चिंतन की आधार भूमि बनाया है। पुरुष कथाकारों में निर्मल वर्मा, महेन्द्र भल्ला, गिरिराज कि"ाोर आदि विदे"ाी परिवे"ा पर लिखने वाले प्रमुख उपन्यासकार हैं, किन्तु नासिरा शर्मा, प्रभा खेतान, उषा प्रियंवदा, मृदुला गर्ग, कमल कुमार सदृ"ा महिला उपन्यासकारों का विदे"ाी पृष्ठभूमि में प्रस्तुत सामाजिक चिंतन वि"ाष उल्लेखनीय है। नासिरा शर्मा ने सात नदियां एक समुंदर में ईरान के दो द"ाक पूर्व के राजनीतिक सांस्कृतिक संकट को मानवीय संकट के रूप में देखा है। प्रभा खेतान ने आओ पेपे घर चलें में अमरीकी औरत के जीवन विसंगतियों का मार्मिक चित्रण किया है। प्रभाखेतान का चिंतन वि"व संदर्भ में नारी नियति को पहचानने का उल्लेखनीय प्रयास है। मृदुला गर्ग ने कठगुलाब और कमल कुमार ने हैमबरगर में क्रम"ाः अमरीका के पा"चात्य जीवन में आधुनिक नारी की नियति और भारतीय नारी के अस्तित्व संघर्ष पर अपना चिंतन व्यक्त किया है।

सामाजिक चिंतन को अभिव्यक्त करने वाले इन समकालीन उपन्यासकारों ने भारतीय समाज में प्राचीन काल से चली आ रही जाति–पाति और साम्प्रदायिकता की समस्या को भी अत्यंत गम्भीरता के साथ अपने उपन्यासों में चित्रित किया है। समकालीन उपन्यासों में एक बड़ा वर्ग विभाजन की त्रासदी पर लिखे उपन्यासों का है। तमस, आधा गाँव, छाको की वापसी, सूखा बरगद आदि उपन्यासों में पुरुष उपन्यासकारों का और जिंदा मुहावरे जैसे उपन्यासों में महिला उपन्यासकारों का चिंतन वि"ाष महत्व रखता है। इसी प्रकार राजनीतिक विसंगतियों पर चिंतन व्यक्त करने वाले पुरुष कथाकारों के बीच मन्नू भण्डारी का महाभोज महिला उपन्यासकारों की महत्वपूर्ण उपस्थिति का परिचायक है।

स्पष्ट है कि समकालीन हिन्दी महिला उपन्यासकारों का सामाजिक चिंतन उन्हीं महत्वपूर्ण बिन्दुओं पर आधारित है जिन पर पुरुष उपन्यासकारों का। वस्तुतः कोई भी साहित्यकार पहले साहित्यकार होता है, महिला, पुरुष, हिन्दू, मुसलमान, अमीर, गरीब, बाद में। किसी भी साहित्यकार का मूल्यांकन उसकी संवेदन"ाीलता और अभिव्यक्ति की शैली के आधार पर किया जाता है न कि वर्ग के आधार पर। अतः पूर्व वर्णित पुरुष और महिला उपन्यासकारों के उपन्यासों म अभिव्यक्त सामाजिक चिंतन के अध्ययन से स्पष्ट है कि समकालीन महिला उपन्यासकारों का सामाजिक चिंतन समकालीन समाज के निम्नमध्यवर्ग से लेकर उच्चवर्ग तक की जीवन विसंगतियों को विभिन्न सामाजिक परिस्थितियों और विभिन्न परिवे"ाों के अंतर्गत रखकर अभिव्यक्त हुआ है। उनके चिंतन के केन्द्र में समाज में नारी की स्थिति, आधुनिक महानगरीय परिवे"ा में कठिन होती जा रही जीवन परिस्थितियां, मानवीय मूल्यों का पतन, स्त्री–पुरुष संबंधों की विसंगतियां, ग्रामीण अंचलों की जीवन विसंगतियां, वहां की राजनीति, संस्कृति, प्र"ाासन, अस्पताल, ि"ाक्षा क साथ साथ सभी कार्यालयों में व्याप्त भ्रष्टाचार, विभाजन की त्रासदी, साम्प्रदायिकता आदि सभी प्रासंगिक विषय पूरी संवेदनशीलता के साथ उपस्थित हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. जैन रजनीकान्त, प्रथम संस्करण 1984, प्रेमचंद के उपन्यासों में समकालीनता –लोकभारती प्रकाशन।
2. यादव डॉ. राजेन्द्र, संस्करण 1997, उपन्यास : स्वरूप और संवेदना–, वाणी प्रका"ान, नई दिल्ली।
3. सिंह डॉ. उमेश प्रसाद, संस्करण–1988, स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास बदलते सामाजिक परिप्रेक्ष्य में– शिक्षा निकेतन, सुड़िया, वाराणसी, ।
4. चतुर्वेदी डॉ. रामस्वरूप, संस्करण–2000, समकालीन हिन्दी साहित्य : विविध परिदृश्य– राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली ।

फुटनोट

1. उपन्यास : स्वरूप और संवेदना– राजेन्द्र यादव, पृष्ठ–113, वाणी प्रका"ान, दिल्ली, संस्करण–1997